ISSN: 2456–5474 RNI No.UPBIL/2016/68367 Vol-1* Issue-11* December-2016
Innovation The Research Concept

चित्रा मुद्गल की कहानियों में कामकाजी स्त्रियों की स्थिति

सुमन कुमारी वरनवाल
शोध छात्रा,
हिन्दी विभाग
विश्वभारती विश्वविद्यालय,
शांतिनिकेतन, पश्चिम बंगाल

सारांश

समकालीन महिला लेखन को अपने विशिष्ट लेखन से समृद्ध करने वाली प्रतिष्ठित एवं चेतना सम्पन्न साहित्यकार चित्रा मुद्गल का योगदान अतुलनीय है। स्त्री होने के कारण चित्रा जी स्त्री की समस्याओं, विसंगतियों, अन्तर्विरोधों, अन्तर्द्वन्द्व से भलीभाँति परिचित हैं। उनके कथा–साहित्य के अध्ययन, चिंतन–मनन के उपरांत यह बात विशेष रूप से हमारे समक्ष प्रस्तुत होती है कि स्त्री स्वाधीनता, समानता, अधिकार, आत्म–सम्मान, शोषण, अन्याय, अत्याचार आदि विषयों पर चित्रा जी ने बेबाक लेखन किया है। इनके साहित्य लेखन की विशिष्टता रही है कि इसमें कल्पना की उड़ान कम और यथार्थता का धरातल अधिक है।

उपरोक्तवादी समाज में कामकाजी स्त्रियों का दायरा बढ़ा है। समय के हिसाब से अपने ज्ञान, शिक्षा तथा अस्तित्व की पहचान ने उसे कामकाजी होना सीखा दिया है। इसी सीख का नतीजा है कि स्त्री बड़ी तेजी से अपने आत्मविश्वास में श्रीवृद्धि और विकास की है। चित्रा मुद्गल की कहानियाँ कामकाजी स्त्री की दोहरी यंत्रणा, पीड़ा, संघर्ष को उजागर करती है। चित्रा जी इसे अपने अनुभव के व्यापक चिंतन से ग्रहण किया है और उसे साहित्य का रूप देने में समर्थ रही है।

मुख्य शब्द : शिक्षा, संघर्ष एवं आत्मविश्वास ।

प्रस्तावना

उत्तर आधुनिकता के दौर में समाज के मापदण्ड और अवधारणाएँ तेजी के साथ परिवर्तित हो रहे हैं। परम्परागत जीवन मूल्यों के आधार पर यह मान्यता रही है कि स्त्री का कार्यक्षेत्र घर ही है, उसके बाहर अन्य क्षेत्रों में उसका प्रवेश वर्जित है। लेकिन वर्तमान समय समाज में इस धारणा में अभूतपूर्व परिवर्तन और परिवर्धन हुए हैं। आधुनिक परिप्रेक्ष्य में स्त्री अपनी प्रतिभा, लगन शिक्षा और संघर्ष के सहारे घर के अलावे बाहरी जगत के विविध क्षेत्रों में प्रवेश किया है। अपनी मेधा और संघर्ष के बलबूते स्त्रियाँ अपने 'स्व' के प्रति जागरूक हुई हैं, उनमें अस्मिताबोध और आत्मबोध की भावना जागृत हुई है। आत्मविश्वास से परिपूर्ण स्त्री संघर्षमय जीवन की हर चुनौती से न केवल जूझती है, बल्कि उसका समाधान खोजने में भी सक्षम है। सुशिक्षित और कामकाजी स्त्रियाँ जहाँ आर्थिक रूप से सम्पन्न हुई हैं वहीं उनके उत्तरदायित्वों में भी बढ़ोत्तरी हुई। डॉ0 घनश्याम दास भुतड़ा ने लिखा है – ''नारी नौकरी करती हुई आर्थिक निर्भरता से संतोष प्राप्त करने की एक सीमा तक सफल हुई है, तथापि उसकी यह स्थिति विशेष उत्साहजनक नहीं। सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन में 'एडजस्ट' न कर पाने के फलस्वरूप वह व्यर्थता बोध से भर जाती है। घर और बाहर के जीवन में समन्वय स्थापित न कर पाने से उसे नौकरी छोड़नी पड़ती है या तनाव की स्थिति को झेलते हुए अनचाहा जीवन व्यतीत करना पड़ता है।''[1] चित्रा मुद्गल की कहानियों में ऐसी अनेक स्त्रियाँ हैं, जो नौकरी करती हैं, तथा अपने परिवार को चलाती हैं। चित्रा मुद्गल के साहित्य में कामकाजी स्त्री की दोहरी कैद का जीवन्त चित्रांकन मिलता है। कामकाजी स्त्रियाँ स्वावलम्बी होकर घर–परिवार की स्थिति को आर्थिक सम्पन्नता तो प्रदान करती है, किन्तु स्त्री का व्यक्तित्व, मन, इच्छा, आकांक्षाएँ कई हिस्सों व टुकड़ों में विभाजित हो जाते हैं।

'लाक्षागृह' कहानी की सुनीता कामकाजी स्त्री है जो रेलवे विभाग में अच्छे पद पर कार्यरत है। लेकिन उसके जीवन की विडम्बना है कि वह सुन्दर नहीं है। अपनी असुन्दरता के कारण वह कुँवारी रह जाती है तथा उसकी छोटी बहनें परिणय सूत्र में बँध जाती है। सुनीता के विवाह के विषय में कई जगह प्रस्ताव भेजे गए किन्तु वह नापसन्द कर दी गई। वैवाहिक जीवन की चाह छोड़ चुकी सुनीता के जीवन में सिन्हा का आगमन होता है। सिन्हा भी

रेलवे विभाग में कार्यरत है। सिन्हा सुनीता के समक्ष विवाह का प्रस्ताव रखता है जिसे सुनीता संहर्ष स्वीकृति देती है। उज्जवल भविष्य और सुखद वैवाहिक जीवन की लालसा में सुनीता अपनी सारी सम्पत्ति सिन्हा को दे देती है। वैवाहिक आनन्दमयी जीवन के सपने बुनती सुनीता को जब सिन्हा और उसकी विवाह की वास्तविकता पता चलती है तो उसके पैरों तले जमीन खिसक जाती है, सिन्हा कहता है –''सोच, आठ सौ रुपये महीने कमाने वाली कहाँ मिलेगी? सौदे की कोई शक्ल–सूरत नहीं होती, मेरे यार मैं जीवन और व्यावहारिकता को एक–दूसरे का पूरक मानता हूँ।''[2] सिन्हा की गंदी मानसिकता से परिचित हो सुनीता उसके विवाह के प्रस्ताव को ठुकरा देती है साथ ही एक पैर से अपाहिज देवेन्द्र से विवाह करने के लिए राजी होती है, जिसे वह तिरस्कृत कर चुकी है। देवेन्द्र अपनी जीवन संगिनी से नौकरी नहीं करवाना चाहता है। अतः सुनीता रेलवे विभाग की नौकरी से इस्तीफा देती है। लेकिन देवेन्द्र की सगाई हो चुकी है और जल्द ही वैवाहिक बंधन में बँधने वाला है। स्वार्थांध और लोभी सिन्हा के इरादों पर सुनीता पानी तो फेर देती है, लेकिन स्वयं भी चोटिल हो जाती है। भूमंडलीकृत समाज में स्त्री 'देह' की मानसिकता से उबर नहीं पाई है। यदि स्त्री सौंदर्यविहिन हो तो उसके विवाह हेतु उसका कामकाज होना अनिवार्य विकल्प है। कारण रूप–सौन्दर्य में कुरूप स्त्री नगण्य है, लेकिन स्वावलम्बी होकर बस पैसा कमाने की मशीन बनने की नियति है, ऐसी मानसिकता पुरुष समाज को है। यहाँ चित्रा जी ने कामकाजी स्त्री की दुखती रग को पकड़ा है जहाँ स्त्री कराहती ही नहीं बल्कि पुरुष समाज की दी हुई पीड़ा से छटपटाती भी है।

'दरमियान' कहानी में कामकाजी स्त्री आकांक्षा दोहरी कैद में जकड़ी हुई। एक तरफ वह दफ्तर की नौकरी व्यस्तता भरी दिनचर्या तो दूसरी तरफ अपनी बेटी मिनी के मध्य स्वयं बँट कर रह जाती है। कामकाजी आकांक्षा दफ्तर में रेगुलेरिटी बनाए रखने के लिए मिनी को लेकर कई समझौते करती है। वह सोचती है – ''औरत होना नरक है नरक! कार्यालय से छूटे, इर्द–गिर्द चलते हुए मर्द थकान के बावजूद कितनी चुस्ती से लबरेज लोकल पकड़ने का आगे बढ़े जा रहे – निश्चिंत! निर्द्वंद्व। एक वह आशंकित, सहमी, चौकन्नी, दुःखी, चलती नहीं – लिथड़ती, घिसटती।''[3]

समाज में जहाँ पुरुष जितनी स्वच्छन्दता, निर्द्वन्द्वता के साथ रहता है स्त्री उतनी ही परम्परागत मूल्यों, रूढ़ियों, शारीरिक बनावट और प्रकृति के साथ निरंतर जूझती है। कहानी में आकांक्षा का दफ्तर से निकलने के उपरांत एक दिन मासिक धर्म शुरू हो जाता है तथा वह मिनी को लाने शिशु विकास केन्द्र थोड़ा विलम्ब से पहुँचती है। वहाँ पहुँचने के क्रम में उसके मस्तिष्क में मिनी को लेकर अनेक अन्तर्द्वंद्व चलते हैं। लेकिन शिशु विकास केन्द्र पहुँचने के उपरांत वहाँ का परिदृश्य देखकर अचम्भित होती है – खिलौनों के ढेर से घिरी मिनी खेलने में व्यस्त थी। उसके पास बैठी थी। मिसेज हर्षवाला की बड़ी लड़की ग्रेस किसी पत्रिका में डूबी हुई। उससे रहा नहीं गया अपराध बोध और खिसियाहट में मिले–जुले भाव से आक्रांत हो उसने पुकारा, ''मिनीऽऽ..''[4]

मिनी अपनी माँ की विवशता को जान परिस्थितियों को अनुकूल बना लेती है और सदैव 'माँ' नाम की रट लगाने की जगह खेल में मन रमा लेती है मिनी के इस समझदारीपूर्ण समझौते के बाद आकांक्षा को महसूस होता है कि उसकी महत्ता, मातृत्व सुख से वंचित कर दिया गया हो। डॉ0 मंगल कप्पीकेरे ने लिखा है – ''स्त्री जीवन से सम्बन्धित कुछ बातें और अनुभूतियाँ ऐसी होती है जिनका अहसास केवल स्त्री ही कर सकती है। माहवारी के समय होने वाली परेशानियों को एवं मनःस्थितियों को 'दरमियान' कहानी के द्वारा व्यक्त किया गया है। इस प्रकार के अछूते विषय को लेकर लिखी गई यह एक सशक्त कहानी है।''[5]

'स्टेपनी' कहानी की पात्रा आभा कामकाजी स्त्री है जो ऑफिस और घर दो पाटों में पिसती है। यद्यपि आभा आर्थिक निर्भरता के कारण आत्मविश्वास से परिपूर्ण खुशमिजाजी है तथापि अपनी बिखरी गृहस्थी को समेटने में असमर्थ है। कहानी में आभा और उसका पति विनोद दोनों कामकाजी है तथा उसकी बेटी चिंकी को पूरा दिन क्रेच में रहना पड़ता है। कामकाजी स्त्रियों के लिए बड़ा संकट है कि घर और ऑफिस दोनों में से एक को भी अनदेखा किया तो स्त्री जीवन नरक में तब्दील हो जाता है। आभा को विनोद और नौकरानी बताशा के अनैतिक, अवैध सम्बन्ध के विषय में भनक लगती है तो वह प्रतिरोध करती है। लेकिन पति विनोद के प्रति हिंसक और तर्क–वितर्क ने आभा को चुप करवा दिया – ''शायद कोई विकल्प नहीं है उसके हिस्से। गृहस्थी और आत्मनिर्भरता के मध्य अपने 'स्व' का संतुलन खोजते हुए कब वह अपने ही घर के लिए स्टेपनी हो गई और बताशा मुख्य चक्का – कौन जाने!''[6]

कामकाजी स्त्री होने के कारण आभा घर की देखभाल के लिए बताशा को रखने के लिए बाध्य है तथा बढ़ती महँगाई की मार से बचने के लिए नौकरी करके स्टेपनी की नियति स्वीकारती है। डॉ0 अर्चना मिश्रा के मतानुसार ''चित्राजी की लेखनी जितनी सहजता और सफलता से पारंपरिक भोज विशेषज्ञ और गृहकार्यो तक सीमित है। गृहिणियों के जीवनदायी स्वरूप को रेखांकित करती है। उतनी ही दक्षता से आज के बदलते परिवेश में समाज के विस्तृत कार्य क्षेत्र से आबद्ध कामकाजी महिलाओं की समस्या और शोषण के नूतन संदर्भो को भी उद्घाटित करती चलती है।''[7] 'सुख' कहानी में फूली नौकरानी के माध्यम से चित्रा जी ने कामकाजी स्त्री की यंत्रणा को प्रस्तुत किया है।

उद्देश्य

वैश्वीकरण के दौर में भाग–दौड़ और व्यस्ततापूर्ण जीवन ने कामकाजी स्त्रियों की कमर तोड़कर रख दी है एक तरफ दफ्तर का बोझ तो दूसरी ओर गृहस्थी का भार अपने कंधों पर ढोती दोहरी यंत्रणा में जकड़ी हुई है। कामकाजी स्त्रियों के स्वावलम्बन ने उन्हें आर्थिक संपन्नता और आत्मविश्वास प्रदान किया है। जिस तेजी के साथ स्त्रियाँ घर के कामकाज के साथ–साथ दफ्तर से जुड़ रही है ऐसे में यह साफ कहा जा सकता

है कि दोहरे उत्तरदायित्वों को बखूबी निर्वहन करके वे अपने भविष्य को उज्जवल बना रही हैं।

निष्कर्ष

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि चित्रा मुद्गल ने कामकाजी स्त्रियों के चुनौतीपूर्ण जीवन का चित्रांकन अपनी कहानियों में बखूबी किया है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *भुतड़ा घनश्याम दास, समकालीन हिन्दी कहानियों में नारी के विविध रूप अतुल प्रकाशन, कानपुर, सं0–1993, पृ0–110–111*
2. *मुद्गल चित्रा, आदि–अनादि–1, सामयिक प्रकाशन, सं0–2008, पृ0–239*
3. *मुद्गल चित्रा, आदि–अनादि–2, सामयिक प्रकाशन, सं0–2008, पृ0–171*
4. *वही, पृ0–182*
5. *कप्पीकेरे डॉ0 मंगल, साठोत्तर हिन्दी लेखिकाओं की कहानियों में नारी, विकास प्रकाशन–2002, पृ0–183*
6. *मुद्गल चित्रा, आदि–अनादि–3, सामयिक प्रकाशन, सं0–2008, पृ0–65*
7. *मिश्रा डॉ0 अर्चना, चित्रा मुद्गल के कथा–साहित्य में युग चिंतन, भारती पब्लिशर्स एण्ड डिस्ट्रीब्यूटर्स, फैजाबाद, 2008, पृ0–39*